वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 406
ISBN-978-93-82071-93-8

समवसरण स्तूप विधान

–रचयित्री –
जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी,
दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

हस्तिनापुर में जन्मे तीर्थंकर, चक्रवर्ती एवं कामदेव पद से समन्वित भगवान श्री शांतिनाथ के केवलज्ञानकल्याणक, पौष शु. दशमी-10 जनवरी 2014 के अवसर पर पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के अमृत महोत्सव 2013-14 के अन्तर्गत प्रकशित

-प्रकाशक-
दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org, www.encyclopediaofjainism.com
E-mail : jambudweeptirth@gmail.com Facebook : jaintirthjambudweep

COURTESY—JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2540	मूल्य
1100 प्रतियाँ	पौष शु. दशमी, 10 जनवरी 2014	20/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी
(दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत)

-: मार्गदर्शन :-
प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

-: निर्देशक एवं सम्पादक:-
कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

-: प्रबंध सम्पादक :-
जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

—कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

अर्हन्तो मंगलं कुर्युः, सिद्धाः कुर्युश्च मंगलम्।
आचार्याः पाठकाश्चापि, साधवो मम मंगलम्।।1।।
मंगलं जिनधर्मः स्यात् , जिनवाणी च मंगलम्।
जिनार्चा जिनगेहाश्च, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।2।।

वर्तमान में सभी मनुष्यों का जीवन मंगलमयी हो, इसके लिए देवदर्शन, भगवान का अभिषेक पूजन, भगवान की भक्ति, मण्डल विधानों का आयोजन मंगल साधन है। जिनेन्द्रदेव की भक्ति, स्तुति कर्मनिर्जरा में विशेष कारण है। भक्त भगवान की भक्ति करते-करते एक दिन स्वयं भगवान बन जाता है। पूज्य माताजी हमेशा अपने प्रवचनों में कहती हैं प्रत्येक प्राणी की आत्मा भगवान आत्मा है। जैसे दूध में घी विद्यमान है, वैसे ही प्रत्येक आत्मा में परमात्मा बनने की शक्ति विद्यमान है।

बीसवीं सदी के प्रथमाचार्य चारित्रचक्रवर्ती आचार्यश्री शांतिसागर जी महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा को प्राप्तकर, आर्यिका ज्ञानमती नाम को पाकर, पूरे विश्व में ज्ञान का अलख जगाने वाली पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने साहित्य जगत में 300 ग्रंथों की रचना करके एक कीर्तिमान स्थापित किया है। 365 दिनों में प्रायः कहीं न कहीं पूज्य माताजी द्वारा रचित इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र, शांति विधान, जिनगुणसम्पत्ति विधान आदि होते रहते हैं।

इस ''समवसरण स्तूप विधान'' में भगवान के समवसरण की एवं स्तूप में विराजमान सिद्धों की पूजा है। यह विधान सभी रोग-शोक को दूर करने वाला है। इस विधान के निमित्त से भगवान के समवसरण का परोक्ष में दर्शन वंदन करके यह भावना भाएं कि हमें एक दिन साक्षात् समवसरण का दर्शन हो। यह विधान सभी के लिए मंगलकारी हो, यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी दीर्घायु एवं स्वस्थ रहें, वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला दिन-दूनी रात चौगुनी वृद्धि करे, यही जिनेन्द्र देव से मंगल कामना है।

प्रस्तावना

—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

तीर्थंकर भगवान को जब केवलज्ञान होता है उस समय सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से धनकुबेर समवसरण की रचना करता है। पृथ्वी से 5000 धनुष अर्थात् 20000 हाथ की ऊँचाई पर समवसरण बनता है। समवसरण का वैभव अचिन्त्य है। समवसरण में 4 मानस्तंभ, 4 सिद्धार्थवृक्ष, 4 चैत्यवृक्ष, 4 धर्मचक्र, 4 स्तूप होते हैं, जिन पर सिद्धों की प्रतिमाएँ विराजमान हैं। जिनके दर्शन, वंदन से सर्वपाप नष्ट हो जाते हैं। पूज्य माताजी ने इस ''समवसरण स्तूप विधान'' के मंगलाचरण में लिखा है—

सब स्तूप जिन सिद्धबिम्ब युत, मुनिगण से भी नित वंदित।
ये सभी आर्यिकाओं वंदित, सुर-नरगण से भी नित पूजित।।
इन स्तूपों के दर्शन से ही, सर्व पाप नश जाते हैं।
हम भी नितप्रति वंदन करके, सब व्याधी शोक नशाते हैं।।

इस 'समवसरण स्तूप विधान' में सर्वप्रथम मंगलाचरण है उसके बाद समवसरण की पूजा है। समवसरण पूजा के बाद समवसरण स्तूप पूजा है। समवसरण में सातवीं भवनभूमि हैं वहाँ पर चारों गलियों में मणियों से निर्मित 9-9 स्तूप होते हैं, जिन पर सिद्धों की प्रतिमाएँ विराजमान हैं। एक तीर्थंकर के समवसरण में 9×4=36 स्तूप होते हैं और 24 तीर्थंकरों के समवसरण में 24×36=864 स्तूप होते हैं। इन सभी स्तूपों पर छत्र हैं, बहुत वर्ण की ध्वजाएँ फहरा रही है, मंगल द्रव्य हैं। स्तूप में बीच में मकराकार सौ-सौ तोरण रत्नों के हैं जो कि अपने-अपने जिनवर से बारह गुणे ऊँचे हैं। इन स्तूपों पर मणियों की प्रतिमाएँ विराजमान हैं। इस समवसरण स्तूप विधान की जयमाला में बहुत सुन्दर स्तूप का वर्णन है।

इस विधान में 2 पूजा हैं, 96 अर्घ्य हैं, 1 पूर्णार्घ्य है और 2 जयमाला हैं। यह विधान सभी प्रकार के अमंगल को दूर कर मंगल को प्रदान करने वाला है। पूज्य माताजी ने विधान के अंत में लिखा है—

जो समवसरण स्तूपों में, जिन सिद्धबिम्ब का यजन करें।
वे सर्व अमंगल दूर करें, नित-नित नव मंगल प्राप्त करें।।
फिर समवसरण का दर्शन कर, प्रभु की दिव्यध्वनि श्रवण करें।
निज 'ज्ञानमती' केवल करके, निज सिद्धिरमा को वरण करें।।

यह विधान सभी के जीवन में सुख शांति को प्रदान करते हुए एक दिन साक्षात् समवसरण का दर्शन करावे, यही मंगल कामना है।

दो शब्द

-ब्र. कु. बीना जैन (संघस्थ)

नमः श्री वर्धमानाय निर्धूत कलिलात्मने।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते।।

बीसवीं शताब्दी में मुनि परम्परा को जीवन्त करने वाले युगप्रवर्तक चारित्र-चक्रवर्ती आचार्य श्री शान्तिसागर जी महाराज हुए हैं। जिनकी चर्या चतुर्थकालीन मुनियों के समान थी। इनके प्रथम पट्टशिष्य आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से आर्यिका दीक्षा प्राप्त कर, आर्यिका ज्ञानमती नाम पाकर, स्वनाम को सार्थक करते हुए परम पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने चारों अनुयोगों का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त करके, ग्रंथों का खूब स्वाध्याय, मनन, चिन्तन करके, अपने ज्ञान को परिपक्व करके 'सहस्रनाम' मंत्र से अपनी लेखनी का शुभारम्भ करके अब तक छोटे-बड़े सभी ग्रंथों को मिलाकर 300 ग्रंथों की रचना की है।

आज के वैज्ञानिक युग में टी. वी. पारस चैनल के माध्यम से लोग घर बैठे पूज्य माताजी के मुखारविंद से प्रतिदिन ज्ञानामृत का पान करते हैं। जब वे हस्तिनापुर आकर पूज्य माताजी का दर्शन करते हैं, तो गद्गद होकर कहते हैं– माताजी हम आपके शुद्ध शास्त्रीय प्रवचन सुनकर धन्य हो गए। आपके द्वारा रचित इन्द्रध्वज, सिद्धचक्र, शान्ति विधान आदि विधानों को पढ़कर, उनकी पूजाओं को सुनकर भक्तिरस से ओतप्रोत हो गए।

पूज्य माताजी के सानिध्य में प्रतिदिन कोई न कोई विधान होता ही रहता है। माइक के द्वारा विधान की पंक्तियाँ जम्बूद्वीप स्थल पर गूँजती रहती हैं। जिसे हम लोग कार्य करते हुए भी सुनते रहते हैं। विधान की 1–1 पंक्ति 1–1 शब्द में जिनागम का सार भरा रहता है।

मेरा परम सौभाग्य है कि पूज्य माताजी की कुल परम्परा में (उनकी बहन की पुत्री रूप में) जन्म लेकर, पूज्य माताजी को गुरुरूप में पाकर, उनसे ज्ञानामृत का पान करके अपने जीवन को धन्य किया है। यह समवसरण स्तूप विधान मेरे जीवन में एक दिन साक्षात् समवसरण का दर्शन करावे, यही मंगल भावना है। पूज्य माताजी स्वस्थ रहें एवं दीर्घायु को प्राप्त करें, इन्हीं मंगल भावनाओं के साथ पूज्य माताजी के चरणों में कोटि-कोटि नमन।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान–टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि–आसोज सुदी 15 (शरदपूर्णिमा) वि. सं. 1991, (22 अक्टूबर सन् 1934)

जाति–अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र**–गोयल, **नाम**–कु. मैना

माता-पिता–श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत–ई. सन् 1952, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा–चैत्र कृ. 1, ई. सन् 1953 को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम-क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा–वैशाख कृ. 2, ई. सन् 1956 को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती 108 आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व–अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग 300 ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि–सन् 1995 में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा 8 अप्रैल 2012 को ''डी.लिट्.'' की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा–हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा-भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ, सम्मेदशिखर में आचार्य श्री शांतिसागर धाम इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा–पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। विशेषरूप से 21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।

शैक्षणिक प्रेरणा–'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार, ऑनलाइन जैन इनसाइक्लोपीडिया आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा–जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982 से 1985), समवसरण श्रीविहार (1998 से 2002), महावीर ज्योति (2003-2004) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

विषयानुक्रमणिका

	विषय	पृष्ठ संख्या
1.	समवसरण का वर्णन	1
2.	समवसरण में आठ भूमि और तीन कटनी	3
3.	मंगलाचरण	6
4.	समवसरण पूजा	7
5.	समवसरण स्तूप पूजा	12
6.	प्रशस्ति	32
7.	समवसरण की आरती	33
8.	समवसरण स्तूप विधान की आरती	34
9.	समवसरण विंशतिका	35
10.	भजन	40

मण्डल का नक्शा

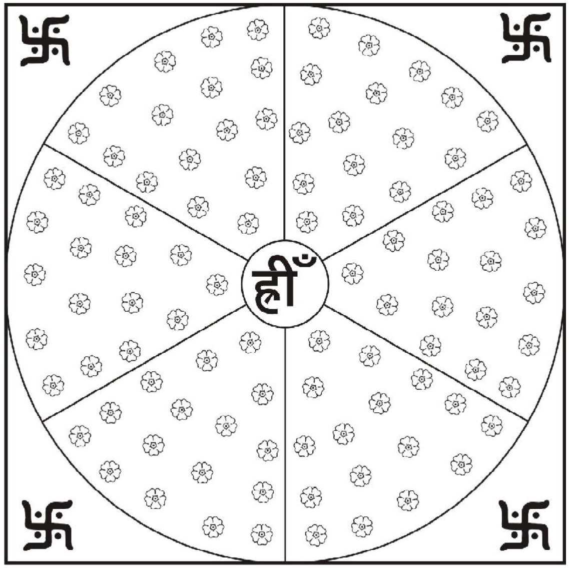

पूजा-2, कुल अर्घ्य-96, पूर्णार्घ्य-1, जयमाला-2

समवसरण का वर्णन

ॐ ह्रीं श्रीशांतिनाथतीर्थंकराय नमः

भगवान को केवलज्ञान प्रगट होते ही इन्द्र की आज्ञा से कुबेर अर्धनिमिष में समवसरण की रचना कर देता है। उस समय भगवान तीनों लोकों को और उनकी भूत, भावी, वर्तमान समस्त पर्यायों को युगपत् एक समय में जान लेते हैं।

भगवान शांतिनाथ का समवसरण पृथ्वी से 5000 धनुष (20000 हाथ) ऊपर आकाश में अधर है। पृथ्वी से एक हाथ ऊपर से एक-एक हाथ ऊँची बीस हजार सीढ़ियाँ हैं। इनसे चढ़कर मनुष्य और तिर्यंच आदि सभी भव्य जीव-बाल, वृद्ध, अंधे, लूले, लंगड़े, रोगी आदि अंतर्मुहूर्त (48 मिनट) में ऊपर पहुँच जाते हैं। भगवान ऋषभदेव का समवसरण 12 योजन (96 मील) का है। आगे घटते-घटते महावीर स्वामी का समवसरण एक योजन (8 मील) का है।

इसमें चार परकोटे और पाँच वेदियाँ हैं। इनके आठ भूमियाँ हैं। चारों दिशाओं में बहुत ही विस्तृत वीथी बड़ी-बड़ी गलियाँ हैं।

इस समवसरण में क्रम से पहले धूलिसाल परकोटा, चैत्यप्रासाद भूमि, वेदी, खातिकाभूमि, वेदी, लताभूमि, परकोटा, उपवनभूमि, वेदी, ध्वजभूमि, परकोटा, कल्पभूमि, वेदी, भवनभूमि, परकोटा, श्रीमण्डपभूमि और वेदी है। आगे

16 सीढ़ी ऊपर चढ़कर पहली कटनी, 8 सीढ़ी चढ़कर दूसरी कटनी, पुनः 8 सीढ़ी चढ़कर तीसरी कटनी है। इसी पर भगवान विराजमान हैं।

प्रत्येक परकोटे और वेदियों में चारों दिशाओं में एक-एक गोपुर द्वार हैं। जिनमें से पूर्वदिशा में ''विजय'', दक्षिण में ''वैजयंत'' पश्चिम में ''जयंत'' और उत्तर में ''अपराजित'' ऐसे नाम हैं। इन चारों के उभय पार्श्व में दो-दो नाट्यशालाएं हैं, जिनमें देवांगनाएं भगवान की भक्ति में विभोर हो नृत्य-गान करती रहती हैं। वहाँ द्वारों के दोनों और नवनिधि, मंगलघट और घूपघट आदि स्थित हैं। प्रत्येक परकोटे के द्वारों पर देवगण हाथ में दण्ड, मुद्गर आदि लेकर रक्षक बनकर खड़े हुए हैं।

24 तीर्थंकरों के समवसरण का प्रमाण

1. भगवान ऋषभदेव का समवसरण	12 योजन (96 मील)
2. भगवान अजितनाथ का समवसरण	$11\frac{1}{2}$ योजन (92 मील)
3. भगवान संभवनाथ का समवसरण	11 योजन (88 मील)
4. भगवान अभिनंदननाथ का समवसरण	$10\frac{1}{2}$ योजन (84 मील)
5. भगवान सुमतिनाथ का समवसरण	10 योजन (80 मील)
6. भगवान पद्मप्रभु का समवसरण	$9\frac{1}{2}$ योजन (76 मील)
7. भगवान सुपार्श्वनाथ का समवसरण	9 योजन (72 मील)
8. भगवान चंद्रप्रभ का समवसरण	$8\frac{1}{2}$ योजन (68 मील)
9. भगवान पुष्पदंतनाथ का समवसनण	8 योजन (64 मील)
10. भगवान शीतलनाथ का समवसरण	$7\frac{1}{2}$ योजन (60 मील)
11. भगवान श्रेयांसनाथ का समवसरण	7 योजन (56 मील)
12. भगवान वासुपूज्यनाथ का समवसरण	$6\frac{1}{2}$ योजन (52 मील)
13. भगवान विमलनाथ का समवसरण	6 योजन (48 मील)
14. भगवान अनंतनाथ का समवसरण	$5\frac{1}{2}$ योजन (44 मील)
15. भगवान धर्मनाथ का समवसरण	5 योजन (40 मील)
16. भगवान शांतिनाथ का समवसरण	$4\frac{1}{2}$ योजन (36 मील)
17. भगवान कुंथुनाथ का समवसरण	4 योजन (32 मील)

18. भगवान अरनाथ का समवसरण	$3\frac{1}{2}$ योजन (28 मील)
19. भगवान मल्लिनाथ का समवसरण	3 योजन (24 मील)
20. भगवान मुनिसुव्रतनाथ का समवसरण	$2\frac{1}{2}$ योजन (20 मील)
21. भगवान नमिनाथ का समवसरण	2 योजन (16 मील)
22. भगवान नेमिनाथ का समवसरण	$1\frac{1}{2}$ योजन (12 मील)
23. भगवान पार्श्वनाथ का समवसरण	$1\frac{1}{4}$ योजन (10 मील)
24. भगवान महावीर स्वामी का समवसरण	1 योजन (8 मील)

समवसरण में प्रवेश करते ही चारों गली में दिव्य रत्नमय मानस्तंभ हैं जो कि भगवान से बारहगुने ऊँचे हैं। जैसे कि–भगवान शांतिनाथ के शरीर की ऊँचाई 160 हाथ है अतः ये बारहगुणे अर्थात् 160×12=1920 हाथ ऊँचे हैं। बीस योजन तक प्रकाश फैलाते हैं। इनके दर्शन से मानी का मान गलित हो जाता है और वह भव्यात्मा सम्यग्दृष्टि बनकर अनंत संसार को सीमित कर लेता है।

केवली भगवान के प्रभाव से चारों तरफ चार सौ कोस तक सुभिक्षता, हिंसा और उपसर्गादि का अभाव, सभी जन्मजात शत्रु-सिंह, हिरण आदि का आपस में मैत्री भाव, छहों ऋतुओं के फल-फूलों का एक साथ आ जाना आदि अतिशय हो जाते हैं।

भगवान के श्रीविहार में आकाश में अधर, उनके चरण के नीचे देवगण स्वर्णमय सुगंधित दिव्य कमलों को रचते जाते हैं और अहिंसा धर्म के दिग्विजय को सूचित करता हुआ 'धर्मचक्र' भगवान के आगे-आगे चलता है एवं सरस्वती-लक्ष्मी देवी आजू-बाजू में चलती हैं। आकाशगामी ऋद्धिधारी साथ में चलते हैं, असंख्य देव-देवियाँ, इन्द्रादिगण पीछे-पीछे चलते हैं एवं साधारण मुनि, आर्यिकाएं, मनुष्य, पशु आदि नीचे-नीचे चलते हैं। जहाँ भगवान रुक जाते हैं वहाँ पुनः कुबेर समवसरण की रचना कर देता है।

समवसरण में आठ भूमि और तीन कटनी

1. पहली "चैत्यप्रासादभूमि" है, इसमें एक-एक जिनमंदिर के अंतराल में पांच-पांच प्रासाद हैं।

2. दूसरी "खातिकाभूमि" है, इसके स्वच्छ जल में हंस आदि कलरव कर रहे हैं और कमल आदि पुष्प खिले हैं।

3. तीसरी "लताभूमि" है, इसमें छहों ऋतुओं के पुष्प खिले हुए हैं।

4. चौथी "उपवनभूमि" है, इसमें पूर्व आदि दिशा में क्रम से अशोक, सप्तच्छद, चंपक और आम्र के वन हैं। प्रत्येक वन में एक-एक चैत्यवृक्ष हैं जिनमें 4-4 जिनप्रतिमाएं विराजमान हैं। प्रत्येक प्रतिमाओं के सामने एक-एक मानस्तंभ हैं।

5. पांचवी "ध्वजाभूमि" है, इसमें सिंह, गज, वृषभ, गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र इन दस चिन्हों से सहित महाध्वजाएं और उनके आश्रित लघुध्वजाएं 108-108 हैं। सब मिलाकर 4,70,880 हैं।

6. छठी "कल्पभूमि" है, इसमें भूषणांग आदि दस प्रकार के कल्पवृक्ष हैं। चारों दिशा में क्रम से नमेरु, मंदार, संतानक और पारिजात ऐसे एक-एक सिद्धार्थवृक्ष हैं। इनमें चार-चार सिद्धप्रतिमाएं विराजमान हैं ।

7. सातवीं "भवनभूमि" में भवन बने हुए हैं। इस भूमि के पार्श्व भागों में अर्हंत और सिद्धप्रतिमाओं से सहित नौ-नौ स्तूप हैं।

8. आठवीं "श्रीमण्डपभूमि" है, इसमें 16 दीवालों के बीच में 12 कोठे हैं जिनमें 1. गणधरादि मुनि, 2. कल्पवासिनी देवी, 3. आर्यिका और श्राविका, 4. ज्योतिषी देवी, 5. व्यंतर देवी, 6. भवनवासिनी देवी, 7. भवनवासी देव, 8. व्यंतर देव, 9. ज्योतिष देव, 10. कल्पवासी देव, 11. चक्रवर्ती आदि मनुष्य और 12. सिंहादि तिर्यंच, ऐसे बारहगण के असंख्यातों भव्यजीव बैठकर धर्मोपदेश सुनते हैं। वहां पर रोग, शोक, जन्म, मरण, उपद्रव आदि बाधाएं नहीं हैं।

प्रथम कटनी पर पूजा द्रव्य एवं मंगल द्रव्य रखे हुए हैं। इसी प्रथम कटनी पर चारों दिशाओं में यक्षेन्द्र अपने मस्तक पर धर्मचक्र धारण किये हुए हैं।

द्वितीय कटनी पर सिंह, बैल, कमल, चक्र, माला, गरुड़ और हाथी इन आठ चिन्हों से युक्त महाध्वजाएं हैं तथा धूपघट, नवनिधियाँ, पूजन द्रव्य एवं मंगलद्रव्य स्थित हैं।

तृतीय कटनी पर गंधकुटी में सिंहासन पर लाल कमल की कर्णिका पर भगवान शांतिनाथ चार अंगुल अधर विराजमान हैं। इनका मुख एक तरफ होते हुए भी चारों तरफ दिखने से ये चतुर्मुखी ब्रह्मा कहलाते हैं। भगवान के पास अशोकवृक्ष, तीन छत्र, सिंहासन, भामंडल, चौंसठ चंवर, सुरपुष्पवृष्टि, दुंदुभि

बाजे और हाथ जोड़े सभासद ये आठ महाप्रातिहार्य हैं। सभी समवसरण में उन-उन तीर्थंकर के शासन देव-देवी विद्यमान हैं। जैसे कि भगवान शांतिनाथ के समवसरण में गरुड़ यक्ष और महामानसी यक्षी विद्यमान हैं।

श्री शांतिनाथ भगवान को मेरा अनंतबार नमस्कार हो।

इस समवसरण का वर्णन तिलोयपण्णत्ति, हरिवंशपुराण और समवसरण स्तोत्र के आधार से हैं।

इस समवसरण स्तूप विधान में चौबीसों तीर्थंकरों के समवसरण में सातवीं भूमि में स्थित नव-नव स्तूपों में विराजमान जिन और सिद्ध प्रतिमाओं की पूजा है।

समवसरण स्तूप विधान

मंगलाचरणम्

अर्हन्तो मंगलं कुर्युः, सिद्धाः कुर्युश्च मंगलम्।
तेषां सर्वाणि बिंबानि, कुर्वन्तु मम मंगलम्।।1।।
तीर्थकृत्सन्निधौ भान्ति, नवस्तूपाः सुरैर्नुताः।
तत्रस्था जिनसिद्धार्चाः, ते ताश्च सन्तु मंगलम्।।2।।

–शंभु छंद–

जय ऋषभदेव जय अजितनाथ, संभवजिन अभिनंदन जिनवर।
जय सुमतिनाथ जय पद्मप्रभु, जिनसुपार्श्व चन्द्रप्रभ जिनवर।।
जय पुष्पदंत शीतल श्रेयांस, जय वासुपूज्य जिन तीर्थंकर।
जय विमलनाथ जिनवर अनंत, जय धर्मनाथ जय शांतीश्वर।।3।।
जय कुंथुनाथ अरनाथ मल्लि, जिन मुनिसुव्रत तीर्थेश्वर की।
जय नमिजिन नेमिनाथ पारस, जय महावीर परमेश्वर की।।
ये चौबीसों तीर्थंकर ही, भव्यों के शिवपथ नेता हैं।
ये कर्म अचल के भेत्ता हैं, त्रिभुवन के ज्ञाता दृष्टा हैं।।4।।
सब स्तूप जिन सिद्धबिम्ब युत, मुनिगण से भी नित वंदित।
ये सभी आर्यिकाओं वंदित, सुर–नरगण से भी नित पूजित।।
इन स्तूपों के दर्शन से ही, सर्व पाप नश जाते हैं।
हम भी नितप्रति वंदन करके, सब व्याधी शोक नशाते हैं।।5।।
प्रभु घात घातिया केवल रवि, भू से पण सहस धनुष ऊपर।
वर समवसरण में कमलासन, पर अधर विराजे तीर्थंकर।।
द्वादशगण दिव्यध्वनी सुनकर, निज आत्मा का अघमल धोवें।
तीर्थंकर प्रभु औ समवसरण, हम सबको मंगलप्रद होवें।।6।।

–दोहा–

समवसरण में सातवीं, भवनभूमि सुखकार।
वहाँ स्तूप जिनबिम्ब को, नमूँ होऊँ भव पार।।

।।अथ जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

पूजा नं.–1

समवसरण पूजा

अथ स्थापना–गीता छंद

चौबीस तीर्थंकर प्रभू, उन समवसरण मनोज्ञ हैं।
प्रभुदर्श कर सकते वही, जो भव्य मुक्ती योग्य हैं।।
तीर्थंकरों की भक्ति से, हम स्वात्महित अर्चा करें।
उन समवसरणों को जजें, आह्वान स्थापन करें।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

अथ अष्टक-अडिल्ल छंद

काल अनादी से तृष्णा दुख देत है।
तास निवारण हेतु नीर शुचि लेत हैं।।
प्रभु समवसरण जो भव्य पूजते भक्ति से।
कीर्ति ध्वजा फर हरे उन्हों की चहुंदिशे।।1।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव भव के त्रयताप निवारण कारणे।
मलयागिरि चंदन घिस लायो पावने।।प्रभु.।।2।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तंदुल उज्जवल धोय, पुंज रचना करें।
निज अखंड पद मिले, पुनर्भव ना धरें।।प्रभु.।।3।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

विविध वर्ण के पुष्प सुगंधित लावते।
पूजत ही यश सुरभि बढ़े दशहूँ दिशे।।
प्रभु समवसरण जो भव्य पूजते भक्ति से।
कीर्ति ध्वजा फर हरे उन्हों की चहुंदिशे।।4।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मोदक पेड़ा बरफी भर के थाल में।
पूजत भागे क्षुधा व्याधि तत्काल में।।प्रभु.।।5।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक में कर्पूर जला आरति करें।
ज्ञान ज्योति को जला भ्रांति तम परिहरें।।प्रभु.।।6।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप धूप घट में जो खेते भक्ति से।
स्वपर भेद विज्ञान उन्हें हो युक्ति से।।प्रभु.।।7।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अमृतफल अंगूर आम केला भले।
फल से पूजत सर्व सौख्य मिलते भले।।प्रभु.।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल फल आदिक अर्घ्य चढ़ाते सुख मिले।
पाप ताप संताप मिटे जन मन खिलें।।प्रभु.।।9।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

पद्म सरोवर नीर ले, जिनपद धार करंत।
तिहुं जग में मुझमें सदा, करो शांति भगवंत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

श्वेत कमल नीलेकमल, अति सुगंध कल्हार।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिले सौख्य भंडार।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य—ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितवृषभादिवर्धमानान्तेभ्यो नमः।

जयमाला

–दोहा –

चिन्मय चिंतामणि प्रभो, गुण अनंत की खान।
समवसरण वैभव सकल, वह लवमात्र समान।।1।।

–शंभु छंद –

जय जय तीर्थंकर क्षेमंकर, तुम धर्म चक्र के कर्ता हो।
जय जय अनंतदर्शन सुज्ञान, सुखवीर्य चतुष्टय भर्त्ता हो।।
जय जय अनंत गुण के धारी प्रभु तुम उपदेश सभा न्यारी।
सुरपति की आज्ञा से धनपति रचता है त्रिभुवन मनहारी।।2।।

प्रभु समवसरण गगनांगण में, बस अधर बना महिमाशाली।
यह इन्द्र नीलमणि रचित गोल आकार बना गुणमणिमाली।।
सीढ़ी इक एक हाथ ऊँची, चौड़ी सब बीस हजार बनी।
नर बाल वृद्ध लूले लंगड़े चढ़ जाते सब अतिशायि घनी।।3।।

पहला परकोटा धूलिसाल, बहुवर्ण रत्न निर्मित सुंदर।
कहिं पद्मराग कहिं मरकतमणि, कहिं इन्द्रनीलमणि से मनहर।।
इसके अभ्यंतर चारों दिश, हैं मानस्तंभ बने ऊँचे।
ये बारह योजन से दिखते, जिनवर से द्विदश गुणे ऊँचे।।4।।

इनमें चारों दिश जिनप्रतिमा उनको सुरपति नरपति यजते।
ये सार्थक नाम धरें दर्शन से मानो मान गलित करते।।
इस समवसरण में चार कोट अरु पांच वेदिकाएं ऊँची।
इनके अंतर में आठ भूमि फिर प्रभु की गंधकुटी ऊँची।।5।।

इस धूलिसाल अभ्यंतर में है भूमि चैत्यप्रासाद प्रथम।
एकेक जैन मंदिर अंतर से पाँच पाँच प्रासाद सुगम।।
चारों गलियों में उभय तरफ दो दोय नाट्यशालाएं हैं।
अभिनय करतीं जिनगुण गातीं सुर भवनवासि कन्याएं हैं।।6।।

फिर वेदी वेढ़ रही ऊँची गोपुर द्वारों से युक्त वहाँ।
द्वारों पर मंगलद्रव्य निधी ध्वज तोरण घंटा ध्वनी महा।।

फिर आगे खाई स्वच्छ नीर से भरी दूसरी भूमी है।
फूले कुवलय कमलों से युत हंसों के कलरव की ध्वनि है।।7।।

फिर दूजी वेदी के आगे तीजी है लताभूमि सुन्दर।
बहुरंग बिरंगे पुष्प खिले जो पुष्पवृष्टि करते मनहर।।
फिर दूजा कोट बना स्वर्णिम, गोपुर द्वारों से मन हरता।
नवनिधि मंगल घट धूप घटों युत में प्रवेश करती जनता।।8।।

आगे उद्यान भूमि चौथी चारों दिश बने बगीचे हैं।
क्रम से अशोक वन सप्तवर्ण चंपक अरु आम्र तरू के हैं।।
प्रत्येक दिशा में एक-एक तरु चैत्य वृक्ष अतिशय ऊँचे।
इनमें जिन प्रतिमा प्रातिहार्ययुत चार-चार मणिमय दीखें।।9।।

इसके आगे वेदी सुन्दर फिर ध्वजाभूमि ध्वज से शोभे।
फिर रजतवर्णमय परकोटा गोपुर द्वारों से युत शोभे।।
फिर कल्पवृक्ष भूमी छट्ठी दशविध के कल्पवृक्ष इसमें।
प्रतिदिश सिद्धार्थ वृक्ष चारों हैं सिद्धों की प्रतिमा उनमें।।10।।

चौथी वेदी के बाद भवन भूमी सप्तमि के उभय तरफ।
नव नव स्तूप रत्न निर्मित, उनमें जिनवर प्रतिमा सुखप्रद।।
परकोटा स्फटिकमयी चौथा मरकत मणि गोपुर से सुन्दर।
उस आगे श्रीमंडप भूमी बारह कोठों से जनमनहर।।11।।

फिर पंचम वेदी के आगे त्रय कटनी सुन्दर दिखती हैं।
पहली कटनी पर यक्ष शीश पर धर्मचक्र चारों दिश हैं।।
दूजी कटनी पर आठ महाध्वज नवविधि मंगल द्रव्य धरे।
तीजी कटनी पर गंधकुटी पर जिनवर दर्शन पाप हरें।।12।।

जय जय जिनवर सिंहासन पर चतुरंगुल अधर विराज रहे।
जय जय जिनवर की दिव्यध्वनी सुनकर सब भविजन तृप्त भये।।
सब जातविरोधी प्राणीगण, आपस में मैत्री भाव धरें।
जो पूजें ध्यावें गुण गावें वे जिनगुण संपति प्राप्त करें।।13।।

–दोहा–

त्रिभुवन के सब विभवयुत, समवसरण जगश्रेष्ठ।
'ज्ञानमती' शिरनत नमूं, बनूं जगत में ज्येष्ठ।।14।।

ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणस्थितचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। पुष्पांजलिः।

–शंभु छंद–

जो भव्य प्रभु समवसरण की अर्चना करें।
संपूर्ण अमंगल व रोग, शोक, दुख हरें।।
निज आत्म के गुणों को संचित किया करें।
'सज्ज्ञानमती' से ही, जीवन सफल करें।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

पूजा नं.–2

समवसरण स्तूप पूजा

–अथ स्थापना –नरेन्द्र छंद –

समवसरण में सप्तमभूमि, भवनभूमि मुनि कहते।
उनमें भवन बने अति ऊँचे, देव देवियाँ वहँ रहते।।
चारों गलियों में नव-नव, स्तूप बने मणियों के।
उनमें रत्नमयी जिनप्रतिमा, पूजूँ श्रद्धा करके।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमासमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमासमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमासमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक-वसंततिलका छंद –

गंगा नदी सलिल उज्ज्वल भृंग में है।
धारा करूँ जिनपदाम्बुज में रुची से।।
अर्हंत सिद्ध प्रतिमा नित पूजहूँ मैं।
नौ लब्धिवत् नव नवों स्तूप में जो।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरि केशर घिसी भर के कटोरी।
चर्चन करूँ जिनपदाम्बुज में रुची से।।अर्हंत.।।2।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत धुले धवल लेकर थाल भर के।
मैं पुंज धर जिनपदाम्बुज में रुची से।।
अर्हंत सिद्ध प्रतिमा नित पूजहूँ मैं।
नौ लब्धिवत् नव नवों स्तूप में जो।।3।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपा जुही वकुल केतकि पुष्प लेके।
अर्पूं सदा जिन पदाम्बुज में रुची से।।अर्हंत.।।4।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लड्डू सुहाल बरफी भर थाल में ले।
अर्पण करूँ जिन पदाम्बुज में रुची से।।अर्हंत.।।5।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्पूर ज्योति जलती दश दिश प्रकासे।
आर्ती उतार कर पूजूँ मैं रुची से।।अर्हंत.।।6।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

खेऊं सुगंधि वर धूप सुधूप घट में।
हों कर्म भस्म उड़ती बहु धूम्र दीखे।।अर्हंत.।।7।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बदाम अखरोट भराय थाली।
अर्पण करूँ सुफल हेतु तुम्हें फलों को।।अर्हंत.।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादि अर्घ उसमें बहु रत्न ले के।
अर्पण करूँ रत्नत्रय फल लाभ हेतू।।अर्हंत.।।9।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिनवनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

पद्म सरोवर नीर ले, जिनपद धार करंत।
तिहुंजग में मुझमें सदा, करो शांति भगवन्त।।10।।

शांतये शांतिधारा।

श्वेत कमल नीले कमल, अति सुगंध कल्हार।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिले सौख्य भंडार।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ ९६ अर्घ्य

–सोरठा–

पुण्यराशि जिनबिंब, अतिशय महिमा को धरें।
जो पूजें हर डिंभ[1], वो न भ्रमें भव वन विषें।।1।।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद–

श्री वृषभदेव की पूर्व गली में, नव स्तूप बखाने।
उसमें जिन सिद्धों की प्रतिमा, भविजन के अघ हाने।।
नव पदार्थ की श्रद्धा करके सम्यक्रत्न धरूँ मैं।
नव केवल लब्धी हेतू ही, नित प्रति यजन करूँ मैं।।1।।

ॐ ह्रीं वृषभदेवसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण की दक्षिण वीथी, नव स्तूप खड़े हैं।
उनमें जिन प्रतिमा को पूजत, धन जन सुयश बढ़े हैं।।नव.।।2।।

ॐ ह्रीं वृषभदेवसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. मायाचारी।

समवसरण में तृतिय गली में, नवस्तूप मनोहर।
गणधर मुनिगण जिनप्रतिमा को, वंदत सर्व तमोहर।।
नव पदार्थ की श्रद्धा करके सम्यक्रत्न धरूँ मैं।
नव केवल लब्धी हेतू ही, नित प्रति यजन करूँ मैं।।3।।

ॐ ह्रीं वृषभदेवसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवनभूमि चौथी वीथी में नव स्तूप दिपे हैं।
पूजत ही दुख दारिद संकट, तन मन व्याधि खिपै[1] हैं।।नव.।।4।।

ॐ ह्रीं वृषभदेवसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अजितनाथ के समवसरण में, भवन भूमि सप्तम है।
प्रथम गली में सुर नर वंदित, नव स्तूप उत्तम हैं।।नव.5।।

ॐ ह्रीं अजितनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में द्वितिय गली में, नवस्तूप अति ऊँचे।
मुनिगण प्रदक्षिणा दे करके, वंदत निज में पहुँचे।।नव.।।6।।

ॐ ह्रीं अजितनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नव स्तूप रत्नों से निर्मित, मणिमय जिन बिंबों युत।
अष्ट द्रव्य से पूजन करते, भविजन बहु भक्ती युत।।नव.।।7।।

ॐ ह्रीं अजितनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पद्मराग मणियों से निर्मित, नवस्तूप अति शोभे।
जिन प्रतिमा को पूजें भविजन, सुर किन्नर मन लोभें।।नव.।।8।।

ॐ ह्रीं अजितनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

---
1. नष्ट होती हैं।

संभवजिन के समवसरण में, भवनभूमि भवनों युत।
दर्शन करते प्रथम गली में, नव स्तूप बिंबों युत।।नव.।।9।।

ॐ ह्रीं संभवनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में भवन भूमि में, ऊँचे भवन बने हैं।
द्वितीय गली में नव स्तूप की, प्रतिमा भविक नमें हैं।।नव.।।10।।

ॐ ह्रीं संभवनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवन भूमि के महलों में नित, सुर जिन न्हवन रचाते।
नृत्य करें बहु नव स्तूप की, जिनप्रतिमा गुण गाते।।नव.।।11।।

ॐ ह्रीं संभवनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दो त्रय चार पांच खन महलों, में सुर खग रहते हैं।
जिनगुण गाते नवस्तूप की प्रतिमा को यजते हैं।।नव.।।12।।

ॐ ह्रीं संभवनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अभिनंदन प्रभु सवसरण में, भवन भूमि अतिसुन्दर।
वापी पर्वत बने मनोहर, नवस्तूप प्रतिमा धर।।नव.।।13।।

ॐ ह्रीं अभिनन्दनजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवन भूमि में उपवन सुंदर, बहुविध वृक्ष फले हैं।
द्वितिय भूमि में नवस्तूप में, जिनवर बिंब भले हैं।।नव.।।14।।

ॐ ह्रीं अभिनंदनजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में नवस्तूप में, चित्र विचित्रित रचना।
अर्हंत सिद्ध बिंब को नमते, भव भव दुख से बचना।।नव.।।15।।

ॐ ह्रीं अभिनन्दनजिनसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भवनभूमि में बावड़ियों में, सुंदर कमल खिले हैं।
नव स्तूप को नमते मुनि के, चित्त सरोज खिले हैं।।
नव पदार्थ की श्रद्धा करके सम्यक्रत्न धरूँ मैं।
नव केवल लब्धी हेतू ही, नित प्रति यजन करूँ मैं।।16।।

ॐ ह्रीं अभिनंदनजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

—पद्धड़ी छंद—

जिनसुमतिनाथ का समवसर्ण, उत[1] भवनभूमि है विविध वर्ण।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।17।।

ॐ ह्रीं सुमतिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवसरण में भवन भूमि, वंदन से मिलती मोक्ष भूमि।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।18।।

ॐ ह्रीं सुमतिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन भवन भूमि है सौख्यकार, मुनिगण वहाँ करते नित विहार।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।19।।

ॐ ह्रीं सुमतिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनसमवसरण में भवन पंक्ति, जहं रमती हैं सुर मनुज पंक्ति।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।20।।

ॐ ह्रीं सुमतिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनपद्मप्रभू का समवसर्ण, सब भव्यों ने ली वहाँ शर्ण।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।21।।

ॐ ह्रीं पद्मप्रभसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. वहाँ पर

जो जिन पूजें तज सकल आधि, वो पा लेते अंतिम समाधि।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।22।।

ॐ ह्रीं पद्मप्रभसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो समवसरण दर्शन करंत, वो भव्य भवोदधि को तरंत।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।23।।

ॐ ह्रीं पद्मप्रभसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवसरण में महलतुंग, सब जन का करते मानभंग।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।24।।

ॐ ह्रीं पद्मप्रभसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर सुपार्श्व का समवसर्ण, उसमें रचना है विविध वर्ण।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।25।।

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो समवसरण से करे प्रेम, उनके हर क्षण ही सकल क्षेम।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।26।।

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवसरण में सभी जंतु, सब वैर भाव तज बने बंधु।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।27।।

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवसरण में साधु वृंद, ले स्वात्म सुधारस का अनंद।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।28।।

ॐ ह्रीं सुपार्श्वनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन चंद्रनाथ से जग सनाथ, गणधर नित नमते नमां माथ।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।29।।

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन समवसरण में भवन भूमि, वंदन से मिलती सिद्धभूमि।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।30।।

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदप्रभु हरते जगत ताप, उन नाम मंत्र सब हरे पाप।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।31।।

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वंदन से होते कर्मक्षार, जिनसमवसरण अतिशय अपार।
स्तूप नवों हैं गगनचुंब, मैं नित पूजूँ जिन सिद्ध बिंब।।32।।

ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

—चौपाई—

पुष्पदंत त्रिभुवन भगवंत, समवसरण उन अतिशयवंत।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।33।।

ॐ ह्रीं पुष्पदंतजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर समवसरण सुखसार, भविजन को शिवसुख दातार।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।34।।

ॐ ह्रीं पुष्पदंतजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्पर्श गंध रस वर्ण विहीन, श्री जिननाथ विविध गुणलीन।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।35।।

ॐ ह्रीं पुष्पदंतजिनसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आतम परमात्म समान, जिनवर भक्ति करे भगवान।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।36।।

ॐ ह्रीं पुष्पदंतजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल समवसरण अभिराम, तुम पद भक्त लहे निजधाम।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।37।।

ॐ ह्रीं शीतलनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शीतल जग शीतल करें, साम्य सुधारस वर्षा करें।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।38।।

ॐ ह्रीं शीतलनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिन्मय चिंतामणि भगवान, भक्त लहे इच्छित वरदान।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।39।।

ॐ ह्रीं शीतलनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लोकालोक प्रकाशी ज्ञान, ज्ञान मेरा कैवल्य समान।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।40।।

ॐ ह्रीं शीतलनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण में रहें जिनेश, श्री श्रेयांस जगत् परमेश।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।41।।

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गणधर जिनगुण में लवलीन, आत्म सुधारस पिये प्रवीण।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।42।।

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर की दिव्यध्वनि खिरे, परमानंद सुख झरना झरे।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।43।।

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन श्रेयांस त्रिभुवन के नाथ, द्वादश गण को करें सनाथ।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।44।।

ॐ ह्रीं श्रेयांसनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वासुपूज्य वासवगण[1] पूज्य, भक्त बने भी क्षण में पूज्य।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।45।।

ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण जिनगुणमणिराशि, पूजत पावें निज गुणराशि।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।46।।

ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनवर भवन भूमि फलदायि, वंदत पुण्य बंधे अतिशायि।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।47।।

ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिनसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. देवगण।

वासुपूज्य को पूजें भव्य, निजसमरस सुख पावें नव्य।
नव स्तूप में जिनवर बिंब, पूजत कटें कर्म कटुनिंब।।48।।

ॐ ह्रीं वासुपूज्यजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–स्रग्विणी छंद –

श्री विमलनाथ जी के समोसर्ण में,
सातवीं भूमि नित सौख्य देवे हमें।
स्तूप के बिंब को पूजते शोक ना,
इष्ट वीयोग आनिष्ट संयोग ना।।49।।

ॐ ह्रीं विमलनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो समोसर्ण में वंदते नाथ को।
प्राप्त हों स्वात्म की सौख्य संपत्ति को।।स्तूप.।।50।।

ॐ ह्रीं विमलनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो क्षमाभाव से क्रोध को वारते।
स्वात्म पीयूष आनंद वो पावते।।स्तूप.।।51।।

ॐ ह्रीं विमलनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो मृदूभाव से मान को मारते।
इन्द्र से भी सदा मान वो पावते।।स्तूप.।।52।।

ॐ ह्रीं विमलनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अनंतेश की दिव्यध्वनि को सुनें।
वे स्वयं शुद्ध निज तत्त्व को ही गुने।।स्तूप.।।53।।

ॐ ह्रीं अनंतनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो सदा भक्ति से नाथ गुण गावते।
इन्द्र भी प्रीति से उन सुयश गावते।।
स्तूप के बिंब को पूजते शोक ना,
इष्ट वीयोग आनिष्ट संयोग ना।।54।।

ॐ ह्रीं अनंतनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो करें नृत्य संगीत भक्ती भरे।
इन्द्र उनके निकट नृत्य तांडव करें।।स्तूप.।।55।।

ॐ ह्रीं अनंतनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो प्रभू पास में आ चमर ढोरते।
इन्द्र भी उनके ऊपर चमर ढोरते।।स्तूप.।।56।।

ॐ ह्रीं अनंतनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धर्मतीर्थेश वीहार करते भले।
धर्म का चक्र उन आगे आगे चले।।स्तूप.।।57।।

ॐ ह्रीं धर्मनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो तुम्हारे उपरि छत्र को धारते।
इन्द्र भी उसके ऊपर छतर लावते।।स्तूप.।।58।।

ॐ ह्रीं धर्मनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो करें नित्य अभिषेक जिनबिंब का।
इन्द्र करते न्हवन मेरु पे उन्हीं का।।स्तूप.।।59।।

ॐ ह्रीं धर्मनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तूप के बिंब की जो करें अर्चना।
आधि व्याधी कभी भी उन्हें रंच ना।।स्तूप.।।60।।

ॐ ह्रीं धर्मनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांति तीर्थेश चक्रीश कामेश हैं।
शांति के हेतु हम नाथ को पूज हैं।।स्तूप.।।61।।

ॐ ह्रीं शांतिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ शांतीश का जो समोसर्ण है।
वो भवांभोधि तारण तरण एक है।।स्तूप.।।62।।

ॐ ह्रीं शांतिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तूप पे छत्र फिरते चंवर ढुर रहें।
तोरणों पुष्प हारों से शोभित रहें।।स्तूप.।।63।।

ॐ ह्रीं शांतिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तूप के बिंब को नित्य मुनि वंदते।
जो नमें वे महामोह को खंडते।।स्तूप.।।64।।

ॐ ह्रीं शांतिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–चामर छंद–

कुंथुनाथ का समोसरण महान् विश्व में।
सातवीं मकान पंक्ति भूमि सौख्य दे हमें।।
स्तूप के अर्हंत सिद्धबिंब को सदा जजूँ।
ज्ञान दर्श सौख्य वीर्य स्वात्म संपदा भजूं।।65।।

ॐ ह्रीं कुंथुनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ भक्ति कर्म पंक धोवने समर्थ है।
स्थान सप्त परम को प्रदान हेतु दक्ष है।।
स्तूप के अर्हंत सिद्धबिंब को सदा जजूँ।
ज्ञान दर्श सौख्य वीर्य स्वात्म संपदा भजूं।।66।।

ॐ ह्रीं कुंथुनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नित्य वंदना करें जिनेश की शतेन्द्र भी।
आप भक्ति से पशू व नारकी न हों कभी।।स्तूप.।।67।।

ॐ ह्रीं कुंथुनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक नाथ भक्ति सर्व पाप नाश हेतु है।
घोर भव समुद्र पार हेतु एक सेतु है।।स्तूप.।।68।।

ॐ ह्रीं कुंथुनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ अर जिनेश का समोसरण अपूर्व है।
आप भक्ति भाव से रचे उसे कुबेर हैं।।स्तूप.।।69।।

ॐ ह्रीं अरनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आप पादपद्म का शरण लिया मुनीश ने।
आत्म सौख्य प्राप्ति हेतु बार बार ही नमें।।स्तूप.।।70।।

ॐ ह्रीं अरनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य कर्म से विहीन आत्मा स्वतंत्र है।
नाथ भक्ति के प्रताप आत्मा पवित्र है।।स्तूप.।।71।।

ॐ ह्रीं अरनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वकर्म से छुड़ाय मोक्ष में पठावते।
ध्यान आपका धरें निजात्म धाम पावते।।स्तूप.।।72।।

ॐ ह्रीं अरनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मल्लिनाथ का समोसरण त्रिलोक ख्यात है।
नाथ के अनंत गुण उन्हीं में आत्मसात् हैं।।स्तूप.।।73।।

ॐ ह्रीं मल्लिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आप नाम मात्र चिंतितार्थ वस्तु दे सके।
आप ध्यान से हि जन्म की परंपरा मिटे।।स्तूप.।।74।।

ॐ ह्रीं मल्लिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

काम मल्ल मोहमल्ल मृत्युमल्ल हैं बड़े।
आपका प्रभाव देख आप के चरण पड़ें।।स्तूप.।।75।।

ॐ ह्रीं मल्लिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्तूप आप देह से ही बारहे गुणे कहे।
पद्मराग से बने मुनींद्र वंद्य हो रहे।।स्तूप.।।76।।

ॐ ह्रीं मल्लिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ मुनिसुव्रतेश का समोसरण दिपे।
नौ निधी वहाँ प्रतेक द्वार पे सदा दिखें।।स्तूप.।।77।।

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

साधु भी महाव्रतादि ले पवित्र हो रहे।
आत्म तत्त्व शुद्ध ध्याय कर्म पंक धो रहे।।स्तूप.।।78।।

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नाथ पाद वंदना अनंत पाप खंडती।
स्वर्ग सौख्य देय गुण अनंत पे भि मंडती।।
स्तूप के अर्हंत सिद्धबिंब को सदा जजूँ।
ज्ञान दर्श सौख्य वीर्य स्वात्म संपदा भजूं।।79।।

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतजिनसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो सदा चित्त में आप को धारते।
वे महात्मा पुरुष सर्व को तारते।।स्तूप.।।80।।

ॐ ह्रीं मुनिसुव्रतजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा –

नमिजिन त्रिभुवन वंद्य, समवसरण में राजते।
नवस्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।81।।

ॐ ह्रीं नमिजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजको निज में ध्याय, मुक्तिरमा को वश किया।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।82।।

ॐ ह्रीं नमिजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

करे मोह का खंड, जिन प्रतिमा जिन सारखी।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।83।।

ॐ ह्रीं नमिजिनसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निजानंद रसमग्न, फिर भी तिहुं जग देखते।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।84।।

ॐ ह्रीं नमिजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नेमिनाथ जग वंद्य, समवसरण महिमा प्रगट।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।85।।

ॐ ह्रीं नेमिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महिमा आप अचिन्त्य, गणधर भी नहिं कह सके।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।86।।

ॐ ह्रीं नेमिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम दर्शन से रम्य, सुख संपति नवनिधि मिले।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।87।।

ॐ ह्रीं नेमिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

परमानंद निमग्न, परम ज्योति को धारते।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।88।।

ॐ ह्रीं नेमिनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पार्श्वनाथ भगवंत, समवसरण त्रिभुवन शरण।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।89।।

ॐ ह्रीं पार्श्वनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रोग शोक दुख द्वंद, तुम भक्ती से दूर हों।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।90।।

ॐ ह्रीं पार्श्वनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैर कलह जगनिंद्य, दूर भगे तुम भक्ति से।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।91।।

ॐ ह्रीं पार्श्वनाथसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूप-मध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कलियुग कष्ट अनंत, नश जाते तुम नाम से।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।92।।

ॐ ह्रीं पार्श्वनाथसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महावीर भगवंत, कल्पवृक्ष दाता तुम्हीं।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।93।।

ॐ ह्रीं महावीरजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिप्रथमवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भविजन वहां असंख्य, समवसरण में बैठते।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।94।।

ॐ ह्रीं महावीरजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिद्वितीयवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्धारथ के नंद, त्रिभुवन जन के हो पिता।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।95।।

ॐ ह्रीं महावीरजिनसमवसरणस्थितभवनभूमितृतीयवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समवसरण जग वंद्य, भवन भूमि से शोभता।
नव स्तूप सुर वंद्य, जिनप्रतिमा पूजूँ सदा।।96।।

ॐ ह्रीं महावीरजिनसमवसरणस्थितभवनभूमिचतुर्थवीथीसंबंधिनवस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-शंभु छंद –

प्रत्येक गली के नव नव ये, चारों के सब छत्तीस हुये।
चौबीस समवसृति के स्तूप, ये आठ शतक चौसष्ठ हुये।।
शिर छत्र फिरें अरु चंवर ढुरें, वंदनवारों से शोभ रहें।
हम इनकी जिन प्रतिमाओं को, नित अर्घ चढ़ाकर कर्म दहें।।1।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिमध्यवीथीसंबंधिचतुष्टयधिकअष्टशतस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं श्रीसमवसरणसंबंधिस्तूपमध्यविराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यो नमः।**

(श्वेत सुगंधित पुष्प या लवंग या पीले चावल से 108 बार या 27 बार जाप्य करना)

जयमाला

–दोहा –

परमब्रह्म परमातमा, परमपिता परमेश।
गाऊँ तुम गुण मालिका, मिटे सकल भवक्लेश।।1।।

–शंभु छंद –

जय जय जिनवर के समवसरण, सातवीं भवनभूमि प्यारी।
जय जय स्तूप जिन सिद्धबिंब, जय जय इनकी महिमा न्यारी।।
जय जय स्तूप पर छत्र फिरें, बहुवर्णध्वजायें फहरातीं।
जय मंगल द्रव्य वहां रक्खें, रत्नों की रचना मनभाती।।2।।

इन भवन भूमियों में ऊँचे, बहु महल बने सुर युगलों के।
संगीत नृत्य से देव वहां, अभिषेक करें जिनबिंबों के।।
कहिं स्वर्ण हिंडोले में बैठीं, देवी सब झूला झूल रहीं।
कहिं खिले कमल से हंसों से, वापी सब जन मन मोह रहीं।।3।।

प्रत्येक गली के मध्य बने, स्तूप विविध रत्नों के हैं।
उनके मधि मकराकार धरें, सौ-सौ तोरण रत्नों के हैं।।
ये अपने अपने जिनवर से, बारह गुणिते ऊँचे माने।
इनमें जिनबिंब बने मणिमय, उनकी पूजा भवदुख हाने।।4।।

वहं छत्र चंवर भृंगार कलश, पंखा ठोना ध्वज दर्पण हैं।
ये मंगल द्रव्य आठ मानें, प्रत्येक एक सौ आठ रहें।।
इन स्तूपों के आसपास, मुनियों के सभाभवन दिखते।
जो पूजें इन सब मुनियों को, उनके सब पाप अरी भगते।।5।।

जहाँ प्रभु का समवसरण रहता, षट्ऋतु के फल फल जाते हैं।
सब ऋतु के फूल खिले सुंदर, दश दिश को भी महकाते हैं।।
सब जात विरोधी क्रूर पशू, आपस में मिलकर रहते हैं।
सुर मनुज पुराने वैर छोड़ आपस में प्रीति करते हैं।।6।।

यह समवसरण का ही प्रभाव, वहाँ जाते भव्य कहाते हैं।
मिथ्यात्व हलाहल विष उगलें, सम्यक्त्व निधी पा जाते हैं।।
निज में ही निज को पाकरके, निजआत्मा को ही ध्याते हैं।
फिर 'ज्ञानमती' पूरी करके, क्रम से शिवपद पा जाते हैं।।7।।

–दोहा–

धन्य धन्य जिनराज तुम, धन्य धन्य तुम भक्त।
धन्य तुम्हारी अर्चना, धन्य धन्य यह वक्त।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतितीर्थंकरसमवसरणस्थितभवनभूमिसंबंधिसर्वस्तूपमध्य-विराजमानसर्वजिनसिद्धप्रतिमाभ्यः जयमाला महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–चौबोल छंद–

जो समवसरण स्तूपों के, जिन सिद्धबिम्ब का यजन करें।
वे सर्व अमंगल दूर करें, नित-नित नव मंगल प्राप्त करें।।
फिर समवसरण का दर्शन कर, प्रभु की दिव्यध्वनि श्रवण करें।
निज 'ज्ञानमती' केवल करके, निज सिद्धिरमा को वरण करें।।1।।

।।इत्याशीर्वादः।।

प्रशस्ति

–दोहा–

श्री ऋषभदेव से वीर तक, तीर्थंकर भगवान।
समवसरण को नित नमूं, कोटि नमूं शुभ ध्यान।।1।।

मूलसंघ में कुंदकुंद–अन्वय सरस्वति गच्छ।
बलात्कारगण में हुए, सूरि नमूँ मन स्वच्छ।।2।।

सदी बीसवीं के प्रथम गुरु महान आचार्य।
चारित्र चक्री श्री – शांतिसागराचार्य।।3।।

इनके पहले शिष्य श्री–वीरसागराचार्य।
प्रथमहि पट्टाचार्य गुरु, नमूँ भक्ति उर धार्य।।4।।

यहां रत्नत्रयनिलय में, जिनवर चरण समीप।
जिनवर गुरुवर सरस्वती, इन चरणों में प्रीत।।5।।

समवसरणस्तूप का, यह विधान सुखकार।
पूर्ण किया जिनभक्तिवश, करो भव्य रुचि धार।।6।।

जब तक नहिं हो 'ज्ञानमती', केवल एक महान्।
तब तक जग में स्थायि हो, यह स्तूप विधान।।7।।

हस्तिनागपुर तीर्थ पर, जब तक तेरहद्वीप।
तब तक स्तूप विधान यह, बने सिद्धिपथ दीप।।8।।

।।इति समवसरणस्तूपविधानं संपूर्णम्।।

।।जैनं जयतु शासनम्।।

समवसरण की आरती

—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी

चौबीस जिनवर के समवसरण की, मंगलदीप प्रजाल के,
मैं आज उतारूँ आरतिया।

समवसरण के बीच प्रभू जी नासादृष्टि विराजे।
गणधर मुनि नरपति से शोभित, बारह सभा सुराजे।।प्रभु जी....
ओंकार ध्वनि, सुन करके मुनि, रत रहें स्वपर कल्याण में,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।1।।

चार दिशा के मानस्तभों को भी मेरा वंदन।
मिथ्यादृष्टि जिनको लखकर पाते सम्यग्दर्शन।।प्रभु जी.....
करके दर्शन, प्रभु का वन्दन, सम्यक् का हुआ प्रचार है,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।2।।

ध्वजाभूमि के अन्दर देखो, ऊँचे ध्वज लहराएँ।
मालादिक चिन्हों से युत वे, जिनवर का यश गाएँ।। प्रभु जी......
शुभ कल्पवृक्ष, सिद्धार्थ वृक्ष, से समवसरण सुखकार है।
मैं आज उतारूँ आरतिया।।3।।

भवनभूमि के स्तूपों में, जिनवर बिंब विराजें।
द्वादशगण युत श्री मण्डप में, सम्यग्दृष्टि राजें।।प्रभु जी..........
अगणित वैभव, युत बाह्य विभव से, शोभ रहें भगवान हैं,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।4।।

धर्मचक्रयुत गंधकुटी पर, अधर प्रभू रहते हैं।
उनकी आरति से ही 'चन्दना' भव आरत टरते हैं।। प्रभु जी.......
प्रभु ऋषभदेव से महावीर तक महिमा अपरंपार है।
मैं आज उतारूँ आरतिया।।5।।

समवसरण स्तूप विधान की आरती

-आर्यिका चन्दनामती

मैं तो आरती उतारूँ रे, सिद्ध जिनेश्वर की।
जय जय जय सिद्ध प्रभू, जय जय जय।।टेक.।।

प्रभु समवसरण की भवन-भूमि में स्तूप हैं........भूमि में स्तूप हैं।
चारों दिश में कहे उनमें, नव-नव स्तूप हैं......नव नव स्तूप हैं।।
सबमें ही जैन बिम्ब, अरिहंत सिद्ध बिम्ब, उनमें विराजित हैं
हो........प्रभु उनमें विराजित हैं।।मैं तो आरती....।।1।।

नव नव चारों दिश में कहे, तो छत्तिस होते हैं.......छत्तिस होते हैं।
चौबीसों समवसरण के, ये आठ सौ चौंसठ हैं.......आठ सौ चौंसठ हैं।।
सबको बार बार नमन, याद करूँ समवसरण, महिमा निराली है।
हो......इनकी महिमा निराली है।।मैं तो आरती......।।2।।

समवसरण स्तूप विधान, पहली बार बना........पहली बार बना।
गणिनी ज्ञानमती माताजी ने, कर दी है रचना......कर दी है रचना।।
"चन्दनामति" भक्ति करूँ, दर्शन की शक्ति वरूँ, मन में यही हैं अरमान।
हो.......मन में यही है अरमान।।मैं तो आरती......।।3।।

समवसरण विंशतिका

—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी

—दोहा—

सरस्वती लक्ष्मी जहाँ, नितप्रति करें प्रणाम।
पुण्यमयी उस धाम का, समवसरण है नाम।।

समवसरण का स्वरूप

छंद-विष्णुपद (कहाँ गये चक्री-बारहभावना)

जहाँ पहुँचते ही दर्शक का पाप शमन होता।
जहाँ पहुँचते ही मानी का मान गलन होता।।
सबको शरण प्रदाता वह ही समवसरण माना।
जिनवर की उस धर्मसभा को नमूँ परमधामा।।1।।

समवसरण के स्वामी

तीर्थंकर प्रभु तप करके बनते केवलज्ञानी।
वे ही बन अरिहंत कहाते समवसरण स्वामी।।
इन्द्राज्ञा से धनकुबेर रचता इक धर्मसभा।
नमूँ उसे नश जाती जिससे भव की पूर्ण व्यथा।।2।।

मानस्तंभ का महत्व

समवसरण की चार दिशा में मानस्तंभ बने।
जिनवर से बारह गुणिते ऊँचे अप्रतिम घने।।
मुख्यद्वार में जाते ही उनका दर्शन होता।
नमूँ वही मानस्तंभ जहाँ मिथ्यात्व वमन होता।।3।।

चैत्यप्रासाद भूमि

प्रथम कोट जो धूलिसाल उससे आगे भूमी।
चैत्यभवन एवं महलों से सहित प्रथम भूमी।।
देव मनुज क्रीड़ा करते वहाँ जाते पुण्यात्मा।
जिनप्रतिमा युत चैत्य भूमि को नमें महानात्मा।।4।।

खातिका भूमि

वेदी के पश्चात् खातिका भू में पुष्प खिले।
जो नव पुष्प कहीं नहिं मिलते वे भी वहाँ मिलें।।
जल से भरी खातिका में भव्यों के भव दिखते।
पावन समवसरण की भू को नमूँ सदा शुचि से।।5।।

लताभूमि

पुनः वेदिका के नन्तर है लताभूमि सुन्दर।
जाते जहाँ मनोरंजन करने को इन्द्र प्रवर।।
कहीं न दिखने वाली दिव्य लताएँ मन हरतीं।
नमूँ तृतिय भूमी को जो संताप सभी हरती।।6।।

उपवन भूमि

दूजे परकोटे के नन्तर उपवन भूमी है।
सप्तच्छद चंपक अशोक वन आम्र की पंक्ती हैं।।
चैत्यवृक्ष चारों दिश में एकेक कहे जाते।
नमूँ जिनेन्द्रों की प्रतिमा मन उपवन खिल जाते।।7।।

ध्वजा भूमि

वेदी के पश्चात् पाँचवी ध्वजाभूमि आती।
दशचिन्हों से युक्त ध्वजा केशरिया लहराती।।
परम अहिंसा का ध्वज लेकर जग में लहराओ।
भक्तिसहित प्रभु समवसरण को बंधु! शीश नावो।।8।।

कल्पभूमि

परकोटा तृतीय के नन्तर कल्पवृक्ष भूमी।
दशविध कल्पवृक्ष से जनता मांग करे पूरी।।
वहाँ बने सिद्धार्थ वृक्ष में सिद्धों की प्रतिमा।
उन सिद्धों को नमते ही निज कार्य सिद्धि करना।।9।।

भवनभूमि

पुनः वेदिका के नन्तर इक भवनभूमि आती।
नव नव स्तूपों से युत महिमा गाई जाती।।

अर्हत् सिद्धों की प्रतिमाएँ उनमें राज रहीं।
उसी भवनभूमी को वंदूँ जो है पुण्यमही।।10।।

श्रीमण्डपभूमि

चौथा स्फटिकमयी परकोटा श्रीमण्डपभूमी।
समवसरण में सबसे अंतिम है अष्टमभूमी।।
वहाँ बने द्वादश कोठों में भव्यजीव बैठें।
नमन करूँ इस भू को जिसके सम्मुख जिन तिष्ठें।।11।।

बारह सभा वर्णन

गणधर मुनि साक्षात् प्रभू के वचन ग्रहण करते।
प्रथम सभा में इसीलिए स्थान ग्रहण करते।।
पुनः आर्यिका देव-देवियाँ मनुज पशू रहते।
जिनवर की दिव्यध्वनि सुनकर जन्म सफल करते।।12।।

गंधकुटी की महिमा

समवसरण के मध्य गंधकुटी में हैं तीर्थंकर।
मुख है एक तथापी दिखते सभी ओर जिनवर।।
इसीलिए तो चतुर्मुखी ब्रह्मा माने जाते।
नमूँ प्रभू की गंधकुटी जहाँ दिव्य सुरभि व्यापे।।13।।

तीर्थंकर महिमा

धर्मतीर्थ जो करें प्रवर्तित तीर्थंकर होते।
चार घातिया कर्म नाश कर वे जिनवर होते।।
उनके कल्याणक में रत्नों की वृष्टी होती।
उन्हें नमूँ तो निश्चित ही मेरी मुक्ती होगी।।14।।

ॐकाररूप दिव्यध्वनि

तीर्थंकर की दिव्यध्वनि ॐकारमयी खिरती।
सात शतक अट्ठारह भाषामय हो परिणमती।।
समवसरण में देव मनुज पशु सभी समझ जाते।
नमूँ दिव्यध्वनि को जिसको केवलज्ञानी पाते।।15।।

गणधर की महिमा

श्रीजिनेन्द्र की वाणी गणधर ही झेला करते।
चारज्ञान से द्वादशांग की रचना वे करते।।
भव्यों के प्रश्नों का उत्तर उनसे ही मिलता।
चौदह सौ बावन गणधर को नमूँ हृदय खिलता।।16।।

प्रमुख श्रोता का पुण्य

दिव्यध्वनि को सुनने वाले एक प्रमुख श्रोता।
होते हैं प्रत्येक समवसरण में इक श्रोता।।
प्रथम भरत अंतिम श्रेणिक ने प्रश्न किये बहुते।
मैं भी बनूँ प्रमुख श्रोता वन्दन कर प्रभु पद में।।17।।

समवसरण का प्रभाव

जहाँ-जहाँ तीर्थंकर का शुभ समवसरण बनता।
वहाँ-वहाँ दुर्भिक्ष आदि सारा संकट टलता।।
शेर गाय भी वैर छोड़ मैत्री धारण करते।
समवसरण के इस प्रभाव को नमूँ भक्ति करके।।18।।

तीर्थंकर के श्रीविहार में स्वर्णकमल रचना

केवलज्ञानी तीर्थंकर जब श्रीविहार करते।
समवसरण विघटित हो जाता गमन गमन करते।।
देवप्रभू के चरणकमल तल स्वर्ण कमल रचते।
सोने में सुगंधि को वे चरितार्थ तभी करते।।19।।

समवसरण दर्शन का महत्व

इस कलियुग में समवसरण साक्षात् नहीं बनते।
चूँकि यहाँ पर तीर्थंकर अब जन्म नहीं धरते।।
फिर भी ये जिनमंदिर भी हैं समवसरण माने।
कालचतुर्थ सदृश इनके दर्शन से भव हानें।।20।।

समवसरण श्रीविहार की महिमा

ऐसा ही इक समवसरण इस धरती पर आया।
ऋषभदेव के उपदेशों को उसने फैलाया।।

गणिनी माता ज्ञानमती की सूझबूझ जानो।
कलियुग में भी सतयुग का दर्शन पाया मानो।।21।।

उपसंहार

हे प्रभु! वर दो मुझको सच्चा समवसरण पाऊँ।
समवसरण के स्वामी तीर्थंकर का पद पाऊँ।।
जब तक वह पद मिले नहीं सम्यक्त्व नहीं छूटे।
उसके बाद ''चंदनामति'' चाहे सब कुछ छूटे।।1।।

—दोहा—

वीर संवत् पच्चीस सौ, चौबिस की कृति जान।
दुतिया कृष्ण आषाढ़ में, किया प्रभू गणगान।।1।।

समवसरण की भक्ति यह, पूर्ण करे सब आश।
यही चन्दनामति हृदय, में है शुभ अभिलाष।।2।।

卐

भजन

—प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चंदनामती माताजी

तर्ज—सौ साल पहले...............

बीते युगों में यहाँ पर समवसरण आया था......समवसरण आया था।
मैंने न जाने तब कहाँ जनम पाया था।।टेक.।।

करोड़ों साल पहले भी, हजारों साल पहले भी।
ऋषभ महावीर इस धरती पर खाए और खेले भी।।
भारत की वसुधा पर तब, स्वर्ग उतर आया था.......स्वर्ग उतर आया था।
मैंने न जाने तब कहाँ जनम पाया था।।1।।

हुआ था जिनवरों को दिव्य केवलज्ञान जब वन में।
तभी ऐसे समवसरणों की रचना की थी धनपति ने।।
इन्द्र मुनी चक्री सबने लाभ बहुत पाया था-लाभ बहुत पाया था।
मैंने न जाने तब कहाँ जनमन पाया था।।2।।

आज के इस महाकलियुग में नहिं साक्षात् जिनवर हैं।
तभी हम मूर्तियों को प्रभु बनाकर रखते मंदिर में।।
सतियों ने इनकी भक्ति करके नाम पाया था-करके नाम पाया था।
मैंने न जाने तब कहाँ जनम पाया था।।3।।

अधर आकाश की रचना धरा पर आज दिखती है।
बीच में ''चन्दना'' देखो प्रभू की गंधकुटी भी है।।
समवसरण का यह वर्णन शास्त्रों में आया था......शास्त्रों में आया था।
मैंने न जाने तब कहाँ जनम पाया था।।4।।

卐